उपसंहार

उपसंहार

नारी जीवन में पुरुष की अपेक्षा विषमताएँ अधिक है। नारी सम्बन्धी भावना किसी काल के विशेष परिवेशानुरूप ही साहित्य में प्रतिबिबिम्त होती है।

मनु स्मृति में कहा गया है कि-

''यत नार्यस्तु पुज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता''

जहाँ स्त्रियो की पूजा होती है वहाँ देवता रमण करते है। इसके विपरीत जहाँ स्त्रियाँ अपूज्य होती है वहाँ सभी क्रियायें निष्फल हो जाती हैं।

आधुनिक काल में हमें प्राय: नारी का संघर्षाकुल रूप मिलता है। जिसकी पृष्ठभूमि का निर्माण ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आर्यसमाज, थियोसोफिकल सोसायटी प्रभृति धार्मिक सामाजिक आदि आंदोलनों ने किया था।

संसार की नारियों में पर्याप्त वैविध्य पाया जाता है । यह वैविध्य स्थल-काल परिवेश पर निर्भर करता है। स्त्री और पुरुष दोनों के संस्करा अनुभव अलग-अलग होते है क्योंकि कुछ अनुभव ऐसे होते है जिनसे केवल स्त्री ही गुजरती हैं।

आधुनिक युग में शिक्षित महिलाओं ने हर क्षेत्र में प्रगति की है और अपनी प्रतिभा और अस्मिता का परिचय दिया है। जहाँ एक तरफ हमें नारी का शोषित, दमित, पीड़ित रूप मिला है, वहाँ कुछ तेज-तर्रार, जुझारू और संघर्षशील नारियाँ

भी दृष्टिपथ में आयी है जिनकी जीवट और जिजीविषा की जितनी ही तारीफ की जाय कम है। सन् 60 के बाद भारतीय स्त्री, शिक्षित, अशिक्षित घरेलू एवं कामकाजी, शहरी एव ग्रामीण सभी क्षेत्रो की नारी में बदलाव के चिन्ह कहीं कम कही ज्यादा दिखाई देने लगे।

व्यक्ति स्वातन्त्रय की भावना ने सामाजिक धरातल पर नवीन मूल्यों को उभारा है। शिवानी ने अपने उपन्यासों में देश की स्वतन्त्रता पूर्व एवं पश्चात् दोनों की ही राजनैतिक परिस्थितियों का स्पष्ट वर्णन अंकित किया है। स्वतन्त्र भारत में गाँवो में रह रहे परिवारों की आर्थिक विषमताएँ ज्यादा देखने को मिलती है। दूसरी ओर बदलते आधुनिक परिवेश, शिक्षा एवं नैतिक मुल्यों का पदार्पण होता जा रहा है। इनके चलते पारिवारिक तनाव बढ़ते चले जा रहे है। लोगो के रिश्तों में दरार सी पड़ने लगी है। कुशंकाओं के कारण पारिवारिक कलह, पाश्चात्य परिवेश रमण परिवारजन, सौतेली माँ आदि पारिवारिक तनाव को बढ़ावा देकर परिवार विघटन का कारण बनते है। इन सभी बातों को शिवानी ने अपने कव्या साहित्य में स्पष्ट किया है।

वैदिक साहित्य में जो नारी का रूप था उससे सर्वथा भिन्न रूप ही समकालीन साहित्य में देखने को मिलता हैं।

अब नारी पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर खड़ी है। ये महिलाएँ अब शिक्षित होकर उच्च पदों पर आसीन होने लगी है डॉक्टर , कलकटर, शिक्षिक आदि बन कर पुरुषों के बराबर स्तर पर पहुँच गई है। अतिथि, श्मशान चम्पा, कैंजा आदि उपन्यासों में ऐसे पात्रों की रचना शिवानी ने की है। आधुनिक नारी पाश्चात्य सभ्यता एवं सस्कृति को अपनाने के कारण कई व्यसनों की भी आदि होती जा रही है।

आधुनिक युग के प्रथम चरण में अंग्रेजो के आगमन के पश्चात नारी दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ। नारी के और भी कई रूप देखे जाने लगे। शिक्षा के द्वारा आधुनिक प्रभाव हमारे समाज पर पड़ा। लोगों की सोच में परिवर्तन आया और नारी स्वतंत्रता के विषय में भी सोचा जाने लगा। कोई भी परिवर्तन अचानक नहीं होता। परिवर्तन धीरे-धीरे होता है। आधुनिक युग खासतौर पर साठोत्तर युग में नारी का नया रूप सामने आता है।

''कोई भी रचनाकार समय से अप्रभावित नही रह सकता। या उदासीन नही रह सकता जिन प्रभावों में वह साँस लेता है, उनसे मुक्त रह कर सृजन सम्भव नहीं।''[1]

शिवानी जी भी अपने समयके प्रभाव में थी इसीलिए उनके उपन्यासों में हमें यह प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

साढोतर महिला उपन्यासकारों का लेखन बहुत ही निर्भीकता के साथ आरम्भ हुआ। बदला हुआ परिवेश तथा चिन्तन की दिशाएँ भी बदली हुई थी।

शिवानी जी के उपन्यासों पर मैंने यह शोध प्रबन्ध लिखा है, इसें मैंने सात अध्यायों में विभक्त किया है।

प्रथम अध्याय के अन्तर्गत शिवानी जी का जीवन परिचय है इसमें इनके जन्म से लेकर मृत्यु तक की बातें है। शिवानी जी का जन्म सौराष्ट्र में हुआ। उनका परिवार अत्यन्त संस्कारवान उच्चवर्गीय एवं समुद्ध था। शिवानी और उनके भाई बहनों को अच्छी शिक्षा दिलवाई गई थी। शिवानीजी को बचपन से ही पढ़ने का बहुत शौक था। उनकी बचपन की शिक्षा उनके धर्मताण पितामह के आदर्शो से प्रेरित थी। शन्ति निकेतन में ही उन्होंने रवीन्द्र संगीत और हिन्दुस्तानी संगीत

1- समसामयिक हिन्दी कहानी में बदलते पारिवारिक सम्बन्ध- डॉ. ज्ञानवती अरोरा, पृ-12

सीखा। सात-आठ साल की शिक्षा गुरुदेव की निगरानी में शांतिनिकेतन में हुई और इस समय को शिवानी जी अपने जीवन का 'सुर्वणकाल' कहती है। शिवानी जी के पिता राजकोट में राजकुमारों को पढ़ाते थे। अत: राजघरानों के तौर-तरीके से वह भली भाँती परिचित रही है। शिवानी का विवाह पुराने रितीरिवाजों एवं परम्परा के अनुसार हुआ था। शिवानी के दो पुत्रियाँ और एक पुत्र है।

शिवानी जी ने प्रारंभिक शिक्षा शांतिनिकेतन में पाई तो लेखन भी छात्रा-जीवन में ही बंगला में शुरु किया । उनका पारिवारिक जीवन भी अत्यन्त खुशहाल था। शिवानी के पति भी विद्वान थे। उनके प्रोत्साहन से शिवानी ने अपने लेखन को और भी परिष्कृत किया। शिवानी जी ने एख भरपूर उमंगो भरा जीवन जिया।

शिवानी की कृतियाँ ही उनके व्यक्तित्व को प्रदर्शित करती है। शिवानी की लोकप्रियता एवं लेखन क्षमता का कारण उनका भाषा ज्ञान था। शिवानी की साहित्यक विधाओं मे उपन्यास, कहानी, निबंध, रेखाचित, संस्मरण एवं बालसाहित्य आदि आते है। शिवानी जी ने अपनी लेखनी का कमाल हर क्षेत्र में दिखाया है।

द्वितीय अध्याय में पूर्ववर्ती उपन्यासों में नारी चित्रण किस तरह का था इस पर प्रकाश डाला गया है। इस अध्याय में प्रेमचन्द पूर्व युग के उपन्यासकारों और उनके द्वारा लिखित उपन्यासों में नारी चित्रण को दर्शाया है। भारतेन्द युग में उपन्यासों का जन्म हुआ लेकिन इसे उपन्यासों का बाल्यकाल ही कहा जायेगा, क्योंकि विकास पूरी तरह नही हो पाया था। प्रेमचन्द पूर्व काल में नारियां दो वर्गो में विभक्त है। नवसुधारवादी लेखकों में सुशिक्षित नारी पात्र मिलते है। इन लेखकों ने दहेज प्रथा, नारी शिक्षा, विधवा-विवाह जैसे नारी चिन्ता से जुड़े प्रश्नों को भी उठाया है। दुसरी तरफ सनातनपंथी लेखकों ने नारी नारी शिक्षा का विरोध किया है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से इन नारी पात्रों में जीवन्तता का अभाव परिलक्षित

होता है। पूर्व प्रेमचन्द काल में हिन्दी उपन्यास का वास्तविक विकास नही हुआ था। हिन्दी के वास्तविक उपन्यास का आरंभ प्रेमचन्द युग से हुआ। प्रेमचन्द हिन्दी के ऐसे पहले लेखक हुए जिन्होने विधवा-विवाह का खुलकर पक्ष लिया था। इनके उपन्यासों के नारी पात्र अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का परिचय देते है। प्रेमचन्द के नारी पात्रों में संघर्ष है, जिजीविषा है। रूढ़ियो और अन्धविश्वासों से टकराने का साहस है।प्रेमचन्द युग के अन्य उपन्यासकारों ने भी नारी के स्वाभिमानी रूप का वर्णन किया है। इस युग की नारी जीवन-संघर्ष में पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने लगी थी।

प्रेमचन्द युग के बाद उपन्यास के इतिहास में सर्वाधिक विकास और परिवर्तन के आयाम स्थापित हुए। इस युग में गांधीवादी विचारधारापरक उपन्यास, आवलिक उपन्यास, मनोविज्ञान के साथ-साथ मनोविश्लेषणात्मक,अस्तित्ववादी चेतना उभर कर सामने आई है।

इस युग के उपन्यासो में गाँव के जमींदार मजदूरिनों के साथ कैसा दुर्व्यवहार करते है, इसका यथार्थवादी वर्णन किया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्रियों पर अत्याचार होते रहते है उनका लौगिक शोषण होता है इसका भी यथार्थ चित्रण इस समय के उपन्यासों में किया गया है। धार्मिक स्थलों पर भी धर्म की आड़ लेकर स्त्रियों के साथ बुरा व्यवहार किया जाता है। आँचलिक उपन्यासों में विशेष क्षेत्रों की नारियों के जातिगत जीवन को तो रूपायित किया ही गया है साथ ही स्त्रियों की नैतिक चेतना को भी दर्शाया है। लेखकों ने गहरी मानवीय दृष्टि से दलित-शोषित जातिकी स्त्रियों के उत्पीड़न को व्यक्त किया है। स्वाधीनता के बाद जो उपन्यास अये उनमें भी यह शोषण लीला अनतरत चलती हुई दिख रही है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में हमें नारी की सूक्ष्म भावनाओं का चित्रण मिलता है।

इन उपन्यासकारों ने काल्पनिक चित्रो की अपेक्षा यथार्थ से सम्पूक्त जीवन को अधिक महत्व दिया है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार टाईप चरित्रों की अपेक्षा व्यक्ति-चरित्रों को समानता में प्रस्तुत करने के पक्षघर है।

तृतीय अध्याय में नारी जीवन की समस्याओं को लिया गया है। ये समस्यायें नारी के जीवन में किस कारण से प्रवेश करती है उन कारणो पर पहले प्रकाश डाला गया है। आर्थिक विवशता के कारण नारी को आज घर से बाहर निकलकर कार्य करना पड़ता है अब उन लड़कियों की शादी में कम दहेज लेते है जो नौकरी पेशा होती है। दहेज प्रथा की समस्या ने मध्यवर्गीय समाज को खोखला बना दिया है। अनमेल विवाह की समस्या यह है की यह एक दु:खी जीवन का आरम्भ करता है, समाज में विधवा स्त्रियों का जीवन अत्यन्त दु:खो से भरा हुआ है। उस स्त्री से उसकी इच्छाएँ उसकी खुशियाँ सभी कुछ छिन ली जाती है। और भारतीय समाज में तो विधवा नारी इस प्रकार अपना जीवन बिताती है मानो उसने कोई पाप किया हो। आज नारी चाहे कितनी भी शिक्षित क्यों न हो लेकिन फिर भी उसे सदैव पुरुष के आधिन ही रहना पड़ता है। बलात्कार एक घिनोना अपराध है जिसकी शिकार नारी कभी भी मानसिक रूप से चैन से जीवन नही बिता पाती है वह इस घटना को अपने दिमाग से निकाल ही नहीं पाती है। नारी के ऊपर यह एक अत्यन्त भयावह अत्याचार है जिसके चलते उसे अपना सारा जीवन शोषित अवस्था में व्यतीत करना पड़ता है। इसी प्रकार वेश्या स्त्रियों का जीवन भी शोषण व अत्याचार से भरपूर होता है। नारी को जबरन इस रास्ते पर धकेला जाता है और एक बार इस रास्ते पर चलने के बाद उसके लिए मुक्ति के दरवाजे बन्द हो जाते हैं। समाज में कभी-कभी नारी को कार्य करने के लिए अकेले ही जीवन बिताना पड़ता है और उस समय उसे बहुत सी समस्याओं का सामना

करना पड़ता है। अकेली देखकर हर कोई उसका फायदा उठाने की कोशिश करता है। धर्म की आड़ में भी स्त्रियों को शोषण का शिकार बनाया जाता है। इन सभी समस्याओं को शिवानी ने अपने उपन्यासों में स्पष्ट करने का प्रभास किया है। जब तक नारी स्वयं ही अपने अधिकारों अपने सम्मान के लिए उठ खड़ी नही होती उसका यह शोषण चलता ही रहेगा।

चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत पात्र परिभाषा एवं उसके महत्व पर प्रकाश डाला गया है। तथा पात्रों का वर्गीकरण किन आधारों पर किया जाता है उसका वर्णन करते हुए नारी के विविध रूपों को चित्रित किया है।

कथानक के पश्चात् उपन्यास का महत्वपूर्ण अंग चरित्र या पात्र होते है। पात्र ही एक ऐसा माध्यम होता है जिसेक द्वारा लेखक जीवन के विभिन्न रुपों को प्रस्तुत करता है। एक श्रेष्ठ उपन्यास के लिए सजीव पात्रों की रचना बहुत जरुरी होती है। पात्रों को विभाजन की श्रेणी में रखने के कई आधार होते है जैसे- लिंग के आधार पर पुरुष पात्र व स्त्री पात्र होते है।पात्रो का विभाजन हम महत्व के आधार पर भी कर सकते है प्रमुख पात्र व गौण पात्र के रूपमें चारित्रिक विशेषताओं की दृष्टि से पात्रों के भेद है प्रतिनिधि या वर्गगत और व्यक्तित्व प्रधान पात्र। प्रत्येक व्यक्ति के दो रूप होते है एक सामान्य व दूसरा विशिष्ट। पात्रों का वर्गीकरण आर्थिक आधार भी किया जाता है। उच्चवर्गीय, मध्यवर्गीय, निम्नवर्गीय पात्र आदि। इस अध्याय में कार्य व पद के आधार पर भी पात्रों को चित्रिंत किया है इनमें शिक्षिकाऐं, नर्स मिडराइफ, डॉक्टर, दूसरे परिवारों में काम करने वाली, नाटक, फिल्म, मोडलिग, एडर्टाजिंग, मार्केटिंग, बड़े-बड़े व्यवसायों में लगी महिलाएँ एयर होस्टेस आदि पात्रो का चरित्र चित्रण किया गया है।

इस अध्याय में शिवानी ने अपने उपन्यासों में जो विशेष नारी रूपों का वर्णन

किया है उनका उल्लेख है। शिवानी ने स्त्री पात्रों में बालिकाओं, से लेकर युवतियों एवं प्रोढ़ाओं का भी वर्णन किया है। शिवानी जी ने नारी के इन विशेष रूपो का वर्णन प्रेमिका, पत्नी, माँ, बहन और बेटी के रूप में तो किया ही है और साथ ही समाज ने जैसा नारी को बनने पर विवश किया है उसका भी वर्णन उन्होंने अपने उपन्यासों में किया है कोई भी नारी अपनी स्वेच्छा से गलत रास्ते पर नही चलना चाहती है लेकिन हालात कुछ इस कदर उस पर हावी हो जाते है कि जो वह नही करना चाहती है वह काम भी कर बैठती है फिर लोंगो की हिकारत भरी नजरों से जीवन भर आदृत होती रहती है।

पंचम अध्याय में शिवानी जी की कुछ समकालीन लेखिकाओं के जीवन परिचय व उनके कृतित्व पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डाला गया है। ये सभी लेखिकाऐं निर्भीक रूप से अपना लेखन करने में सक्षम है। इन नारी लेखिकाओं की अस्मिता और दृष्टि स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आ रही है। इनका अपने लेखन पर पूर्ण अधिकार था। इन्होंने किसी भी विषय पर बड़े ही स्पष्ट रूप से अपना लेखन कार्य किया है चाहे वह 'सैक्स' का विषय हो या नारी समस्या से जुड़ा हुआ कोई विषय। इन समस्त लेखिकाओं ने अपने सृजन से उपन्यास जगत को गौरवान्वित किया है।

साठोत्तर महिला उपन्यासकारो में कुछ विशेष लेखिकाओं का वर्णन इस अध्याय में है। तथा उनके विशेष उपन्यासों पर भी थोड़ा बहुत प्रकाश डाला गया है इससे हमें शिवानी की समकालीन लेखिकाओं के विचार स्पष्ट रूप से समझ में आ जाते है। उषा प्रियंवदा के लेखन में हमें बनावट नजर नही आती है। उन्होंने बाहरी जीवन को बड़ी यथार्थता से वर्णित किया है। उषा जी के नारी पात्र भावुकता के स्थान पर विवेक का ही वरण करते है। कृष्ण सोबती के लेखन में

हमे नारी मन का स्वतंत्र रूप देखने को मिलता है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में मन्नु भण्डारी का एक विशिष्ट स्थान है। मन्नू जी में अपने समकालीन सत्य को बेपर्द करने का साहस है। ममता कालिया ने नारी जीवन के पक्ष को सुक्ष्मता से परखा है। निरुपमा सोबती के लेखन में हमें नारी-विमर्शके नुकीले कोण उपलब्ध होते है, उनकी रचनाएँ साक्षात जीवन से प्रभावित रही है। दीप्ति खंडेलवाल के अधिकांश उपन्यासों में नारी शोषण को रेखांकित किया गया हैं। नारी के स्वतन्त्र व्यक्तित्व और स्वाभिमान का भी वर्णन दीप्ति जी ने अपने उपन्यासों में किया है। राजी सेठके लेखन में एक ताजगी का अहसास होता है। मालती जोशी के उपन्यासों में पुरुष और नारी की वृत्तियों का सुक्ष्म अध्ययन है। इनके लिखे उपन्यास स्त्री के लिए जीवन संचार जैसे है। मेहरुन्निसा परवेज के उपन्यासों में मुस्लिम-समाज का नगरीय परिवेश, उन्के द्वन्द्व, विश्वास-अविश्वास, आपसी संघर्ष नारी चेतना का मूल्यों से संघर्ष आदि प्रवृत्तियों को उजागर किया है। शशी प्रभा शास्त्री के उपन्यासों में एक संतुलित दृष्टिकोण मिलता है। समाज के दो पाटों के बीच पीसते-जुझते मध्यवर्गीय समाज में नारी की जो स्थिति है, उसे लेखिका ने स्पष्ट किया है। मंजुल भगतकी रचनाओं में दर्द, पीड़ा की कसक बराबर महसूस की जाती है। मृदुलाजी की नायिकाएँ यौन-मुक्ति या स्वेच्छाचार की पक्षघर रही है। नारी मात्र मानसिक उहापोह से ग्रस्त है। इस प्रकार हम देखते है कि साठोत्तर महिला उपन्यासकारों के चिन्तन की दिशाएँ व परिवेश दोनों ही बदले हुए थे। इन लेखिकाओं ने नवलेखन का महत्व दिया है।

षष्ठम् अध्याय में शिवानी जी की भाषा शैली पर प्रकाश डाला गया है। भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम होती है और शिवानी जी का तो भाषा पर पूर्ण अधिकार था। उन्होंने अपने उपन्यासों में भावनुकूल, पात्रानुसार भाषा का प्रयोग

किया है। शिवानी जी ने अपनी भाषा को सहज, स्वाभाविक और पात्रानुकूल बनाने के लिए अनेक प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। शिवानी जी का कई भाषाओं पर पूर्ण अधिकार है, इसी वजह से इनका शब्द भण्डार काफी व्यापक है। शिवानी की भाषा में हमें काव्य सौन्दर्य का आनंद भी प्राप्त होता है। शिवानी ने भाषा में नवीन अभिव्यंजना की भी सृष्टि की है। शिवानी की गणना एक अच्छे शैलीकार के रूप में होती है। शिवानी ने अपने उपन्यासों में भाषा की सभी शैलियों का वर्णन कियै है। उनका अपनी भाषा पर यथेष्ट अधिकार है और वे अपने हृदय के भावों को इसके द्वारा इतनी सहजता से अभिव्यक्ति देती है कि पाठक विषय वस्तु के साथ-साथ चल देता है और उसे लगता है कि पात्र जीवन्त होकर उसके सामने खड़े हो गये है।